Volume 1; Issue 1;
Oct-Dec. 2024

E-ISSN: 3048-6742

Sanskriti-Samvahika

संस्कृति-संवाहिका

Peer Review Indexed Refreed Journal

Quarterly Journal

Editor-in-Chief

Dr. Ashwini Devi

Sanskriti-Samvahika संस्कृति- संवाहिका

E-ISSN: 3048-6742

https://sanskritisamvahika.in

Volume 1; Issue 1; Oct.-Dec. 2024; Page No. 28-32

Peer Review, Indexed and Refreed Journal

भर्तृहरि दर्शन में वाक्-तत्त्व

डा. सोनमती पटेल

असि०प्रोफेसर , संस्कृत विभाग,

आर्यकन्या डिग्री कालेज, प्रयागराज

ईमेल- nam.jnu@gmail.com

सारांश

वागेव विश्वा भुवनानि जज्ञे, वाच इत्सर्वममृतं यच्च मर्त्यम्। अथेद् वाग्बुभुजे वागुवाच पुरुत्रा वाचो न पदं यच्च नाह। सर्वप्रथम वाग् पर भाषिक दृष्टि से विचार करें तो वच् भाषमाणे धातु से क्विप् प्रत्यय करके वाक् तथा बहु बृंहणे धातु से बृहणशील अर्थ में ब्रह्म की व्युत्पत्ति की जाती है। निरुक्त में 'वाक् ' की व्युत्पत्ति करते हुए यास्काचार्य कहते हैं 'वाक् कस्मात् वचेः'| भर्तृहरि वाक् की एक अविभाज्य और सर्वतः पूर्ण इकाई के रूप में वाक्य को स्वीकार करते हैं। क्योंकि वाक्य बुद्धिस्थ रूप में एक और अखण्ड होता है। वाक्य के स्वरूप पर विचार करते हुए भर्तृहरि कहते हैं – यह सर्वथा निराकांक्ष और स्वतः पूर्ण होता हौ , भले ही यह एक वर्ण के रूप में क्यों न हो। वाक्य का उद्देश्य स्वयं वाक् के उद्देश्य से अभिन्न है। एक बुद्धि की भावना को दूसरी बुद्दि का विषय बना देना । यह भावना यदि एक वर्ण से पूरी हो जाए ,तो फिर शब्दों की सार्थ्कता या निरर्थकता ,अथवा पदभेद आदि की बात पर विचार करना व्यर्थ हो जाता है।

मुख्य शब्द: *भर्तृहरि, दर्शन, वाक्-तत्त्व*

वागेव विश्वा भुवनानि जज्ञे, वाच इत्सर्वममृतं यच्च मर्त्यम्। अथेद् वाग्बुभुजे वागुवाच पुरुत्रा वाचो न पदं यच्च नाह। सर्वप्रथम वाग् पर भाषिक दृष्टि से विचार करें तो वच् भाषमाणे धातु से क्विप् प्रत्यय करके वाक् तथा बहु बृंहणे धातु से बृहणशील अर्थ में ब्रह्म की व्युत्पत्ति की जाती है। निरुक्त में 'वाक् ' की व्युत्पत्ति करते हुए यास्काचार्य कहते हैं 'वाक् कस्मात् वचेः'[1]|

वाक् तत्त्व पर दार्शनिक दृष्टि से विचार करने पर वाग् दर्शन सर्वप्रथम ऋग्वेद में प्राप्त होता है[2]। अर्थात् विद्वान् मनीषीजन वाणी के चार रूप परा-पश्यन्ती-मध्यमा-बैखरी मानते हैं । इन चारों वाक्तत्त्व में परा – पश्यन्ती –मध्यमा गुप्तरूप में छिपे रहते हैं। जबकि बैखरी वाक् मनुष्य के व्यवहार का विषय बनती है।[3]

ब्राह्मणग्रन्थों में और भी स्पष्ट रूप से वाग्दर्शन अभिव्यक्त होता है। "वागेव विश्वा भुवनानि जज्ञे"[4] अर्थात् परावाक् से ही सम्पूर्ण विश्व निःसृत हुआ है। वेद के अनन्तर वाक् को दार्शनिक धरातल पर भर्तृहरि ने सर्वाधिक स्पष्ट रूप से व्याख्यायित किया है। वेद का अनुकरण करते हुए भर्तृहरि कहते हैं 'न सोऽस्ति प्रत्यये लोके यः शब्दानुगमादृते। अनुविद्धमिव ज्ञानं सर्वं शब्देन भासते'॥[5] अर्थात् इस संसार में ऐसा कोई भी ज्ञान नहीं है जो शब्द से न प्रकट होता हो। तात्पर्य यह है कि किसी भी ज्ञान को प्रकट करने का एकमात्र माध्यम शब्द ही है चाहे वह जाग्रतावस्था का ज्ञान हो या प्रसुप्तावस्था का।

भर्तृहरि के मत में परा वाक् शब्दब्रह्म है जिसे वे 'अनादिनिधनं ब्रह्म शब्दतत्त्वं यदक्षरं। विवर्ततेऽर्थभावेन प्रक्रिया जगतो यतः' कहकर व्यक्त करते हैं। अर्थात् जो ब्रह्म नित्य बृंहणशील है तथा जिसका आदि और अन्त सम्भव नहीं है। वह वास्तव में शब्दतत्त्व है। अक्षर है। उसी शब्दतत्त्व का विवर्त रूप यह संसार हमें बोधित होता है। तात्पर्य यह है कि इसी शब्दतत्त्व से सम्पूर्ण पदार्थ और सम्पूर्ण विश्व प्रकाशित होता है।

जैसे वेदान्तदर्शन में अज्ञान की आवरण और विक्षेप शक्तियों से ब्रह्म में सृष्टि का आविर्भाव होता है, उसी प्रकार शब्दतत्त्व में भी काल शक्ति से जगत् का विवर्तन संभव होता है। वाक् का वास्तविक रूप प्रयोक्ता की आत्मा बनकर स्थित है। यही नित्य शब्द कहलाता है। महाभाष्यकार पतञ्जलि और व्याडि के नित्य शब्द का भी यही अर्थ है। कार्य शब्द का वह

---

1 निरुक्त

2 चत्वारि वाक् परिमिता पदानि तानि विदुर्ब्रह्मणा ये मनीषिणः। गुहा त्रीणि निहिता नेङ्गयन्ति, तुरीयं वाचो मनुष्याः वदन्ति। महाभाष्य

3 वैखर्या मध्यमायाश्च पश्यन्त्याश्चेतेदद्भुतम् अनेकतीर्थभेदायास्त्रैय्या वाचः परं पदम्। वाक्यपदीयम्

4 ब्राह्मण

5 वाक्यपदीयम्, ब्रह्मकाण्ड

रूप है जो व्यवहार का विषय है और श्रुति रूप में प्रतिबिम्बित होता है। "अपि प्रयोक्तुरात्मानं शब्दमन्तरवस्थितम्। प्राहुर्महान्तमृषभं येन सायुज्यमिष्यते।"[6]

भर्तृहरि वाक् की अभिव्यक्ति के तीन चरण मानते है- पश्यन्ती , मध्यमा और बैखरी। बैखर्या मध्यमायाश्च पश्यन्त्याश्च ऐतदद्भुतम् । अनेकतीर्थभेदायाः त्रैय्या वाचः पात्रं पदम्।।[7] अर्थात् तीन पदों वाला वाक्तत्त्व परावाक् सर्वोच्च पद है। तथा तीन पद हैं – बैखरी –मध्यमा तथा पश्यन्ती। व्याकरण के क्षेत्र में इन तीन चरणों की ही विवेचना संभव है । इसे दूसरे शब्दों में कहें तो व्याकरण की चर्चा की चर्चा करते हुए चौथे चरण की चर्चा अनावश्यक ठहरती है। इन तीन चरणों से परे चौथे चरण के विषय पर भी भर्तृहरि ने बार-बार बल दिया है। परन्तु वे उसे भाषा विवेचन का मुख्य आधार नहीं मानते।

बैखरी वाक् दूसरों के द्वारा अनुभूयमान व्यक्त शब्द है, जिसे भर्तृहरि कण्ठस्थानीय कहते हैं। "परैः संवेद्यं यस्याः श्रुतिविषयत्वेन प्रतिनियतं श्रुतिरूपं सा बैखरी।[8]" मध्यमा का सम्बन्ध बुद्धि और उच्चारण की प्रयत्नावस्था से है, जिसमें वाणी सूक्ष्म व्यंग्य रूप में रहती है। "मध्यमा तु अन्तः संनिवेशिनी परिगृहीतक्रमेव बुद्धि मात्रोपादाना "। पश्यन्ती बुद्धिस्थ शब्द की वह स्थिति है जिसमें शब्द अखण्ड रूप में मन या बुद्धि में स्थित रहता है। ''प्रति संहृतक्रमा सत्यप्यभेदे सामाविष्ट क्रमशक्तिः पश्यन्ती।'' पश्यन्ती वाक् व्यवहारातीत भी होती है। यह केवल योगियों के समाधि का विषय बनती है। "परन्तु पश्यन्ती रूपमनपभ्रंशमसंकीर्णं लोकव्यवहारातीतम्"

परा वाक् भर्तृहरि के मत में शब्दब्रह्म है। 'वाग् वै ब्रह्म' जिसे भर्तृहरि "अनादिनिधनं ब्रह्म शब्दतत्त्वं यदक्षरं विवर्ततेऽर्थभावेन प्रक्रिया जगतो यतः" कहकर आदि अन्त से रहित अक्षर कहते हैं। जिसका यह सम्पूर्ण विश्व विवर्त है। ब्राह्मण ग्रन्थों में ' वागेव विश्वा भुवनानि जज्ञे वाच इत्सर्वममृतं यच्च मर्त्यम्। यहाँ उपर्युक्त तीनों वाग् को स्वीकार कर व्याकरण को वाणी का परमपद कहा गया है। यही व्याकरणस्मृति भी है। सैषा व्याकरणस्मृतिः। इसे ही मोक्ष का द्वार तथा वाणी का चिकित्सक कहा गया है। "तद्द्वारमपवर्गस्य वाङ्मलानां चिकित्सितम्"।[9]

`परा वाक् मूलचक्रस्था पश्यन्ती नाभि संस्थिता हृदिस्था मध्यमाज्ञेया बैखरी कण्ठदेशगा'। भर्तृहरि परा वाक् को नित्य शब्द मानते हैं । शब्द का वास्तविक रूप प्रयोक्ता की आत्मा बनकर बैठा है। यही रूप नित्य शब्द कहलाता है। कार्य शब्द का वह

---

6 वाक्यपदीयम्

7 वाक्यपदीयम्

8 वाक्यपदीयम्

9 वाक्यपदीयम्, ब्रह्मकाण्ड

रूप है जो व्यवहार में आता है और जो श्रुतिरूप में प्रतिबिम्बित होता है।

"अपि प्रयोक्तुरात्मानं शब्दमन्तरवस्थितम् प्राहुर्महान्तमृषभं येन सायुज्यमिष्यते"[10] यहाँ 'शब्दब्रह्म' शब्द, संज्ञा, क्रिया या पद के रूप में कोई अवयव नहीं है, अपितु वह परा वाक् है। यदि वाक् का माध्यम न हो तो कभी भी किसी भी भावना को प्रकाशित नहीं किया जा सकता है। सम्पूर्ण संसार को आपस में जोडने वाली और पारस्परिक व्यवहार की माध्यमभूता शक्ति भी वाक् तत्त्व ही है। इस प्रकार भर्तृहरि वाक् की अभिव्यक्ति के तीन चरण मानते है। व्याकरण की दृष्टि से इन्हीं तीनों पद का विवेचन संभव है।

भर्तृहरि वाक् की एक अविभाज्य और सर्वतः पूर्ण इकाई के रूप में वाक्य को स्वीकार करते हैं। क्योंकि वाक्य बुद्धिस्थ रूप में एक और अखण्ड होता है। वाक्य के स्वरूप पर विचार करते हुए भर्तृहरि कहते हैं – यह सर्वथा निराकांक्ष और स्वतः पूर्ण होता हौ , भले ही यह एक वर्ण के रूप में क्यों न हो। वाक्य का उद्देश्य स्वयं वाक् के उद्देश्य से अभिन्न है। एक बुद्धि की भावना को दूसरी बुद्दि का विषय बना देना । यह भावना यदि एक वर्ण से पूरी हो जाए ,तो फिर शब्दों की सार्थ्कता या निरर्थकता ,अथवा पदभेद आदि की बात पर विचार करना व्यर्थ हो जाता है।

शब्दतत्त्व की अनेक शक्तियाँ दिक् साधन क्रिया काल[11] , आदि के रूप में मानी जाती है। उन्हीं के आधार पर मूलतः शब्दतत्त्व के रूप में वह ब्रह्म तत्त्व एक होते हुए भी भिन्न आकारों या नामों के द्वारा भिन्न-भिन्न रूप में विभक्त सा माना जाता है[12]।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

१. भर्तृहरि, वाक्यपदीयम् ब्रह्मकाण्ड , सत्यकामवर्मा, मुंसीलाल मनोहरलाल,नई दिल्ली, १९७०

२. अय्यर, सुब्रह्मय्य, (अनु०द्विवेदी रामचन्द्र), भर्तृहरि, प्राचीन टीकाओं के आलोक में भर्तृहरि का एक अध्ययन, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर, १९८१

३. भर्तृहरिः, वाक्यपदीयम्, पदकाण्डम्, द्वितीयो भागः, (व्याख्याद्वयोपेतम्) सम्पूर्णानन्द संस्कृतविश्वविद्यालयः, वाराणसी, २०१६

४. भर्तृहरिः, वाक्यपदीयम्, तृतीयकाण्ड, प्रथमो भागः, अय्यर, सुब्रमनियम् (सम्पादक),डेक्कन

10 वाक्यपदीयम्, ब्रह्मकाण्ड, १३१

11 दिक् साधनं क्रिया काल इति वस्त्वभिधायिनः। शक्तिरूपे पदार्थानामत्यन्मनवस्थिताः॥ वाक्यपदीयम् ,तृतीयकाण्ड

12 एकमेव यदाम्नातं भिन्नं शक्तिव्यपाश्रयात्। अपृथक्त्वेऽपि शक्तिभ्यः पृथक्त्वेनेव वर्तते॥ वाक्यपदीयम्, ब्रह्मकाण्ड, कारिका-२

कालेज पोष्ट ग्रेजुएट एण्ड रिसर्च इंस्टीट्यूट, पुणे, १९९४

५. भर्तृहरिः, वाक्यपदीयम्, हरिनारायण तिवारी (व्याख्याकार एवं सम्पादक), प्रथमो भागः, पदकाण्डम् (पदकाण्डे द्वितीयो भागः), चौखम्बा संस्कृत सीरीज आफिस वाराणसी, २०१५

६. पतञ्जलिः, व्याकरणमहाभाष्यम् (भाग-१,२,३,४,५), भार्गवशास्त्री जोशी, चौखम्बा संस्कृत प्रतिष्ठान, दिल्ली, २०१४

७. पतञ्जलिः, महाभाष्यम्, युधिष्ठिरो मीमांसकः, श्री प्यारेलाल द्राक्षादेवी न्यास (ट्रस्ट्र) सी० ४, सी०सी०कालोनी, दिल्ली, वि.सं.२०३१

८. द्विवेदी, कपिलदेवः, अर्थविज्ञान और व्याकरन दर्शन, विश्वविद्यालय प्रकाशन वाराणसी, २००८

९. शास्त्री, श्रीवत्स, हेलाराज का व्याकरण दर्शन को योगदान, विद्यानिधि प्रकाशन दिल्ली, २०००